अध्याय 4

नवारंभ— नगर एवं राज्य

राज्य की रक्षा के लिए राजधानी तथा सीमांत नगरों की दुर्गबंदी आवश्यक है। भूमि ऐसी होनी चाहिए जो न केवल जनसामान्य का पोषण कर सके, अपितु आपदाओं के समय आगंतुकों का भी निर्वाह कर सके।... राज्य-क्षेत्र रमणीय होना चाहिए जिसमें कृषियोग्य क्षेत्र, खनिजयुक्त प्रदेश, काष्ठवन, गजवन तथा गोधन संपन्न चारागाह विद्यमान हों। जल के लिए केवल वर्षा पर निर्भरता नहीं होनी चाहिए अपितु राज्य में नदियाँ, जलाशय तथा अन्य स्रोत भी हों। सड़कें तथा जलमार्ग सुगम व सुव्यवस्थित होने चाहिए। राज्य में उत्पादक अर्थव्यवस्था होनी चाहिए, जो विविध प्रकार की वस्तुओं से परिपूर्ण हो...।

— कौटिल्य (अर्थशास्त्र)

चित्र 4.1 — मगध महाजनपद की राजधानी राजगृह (आधुनिक राजगीर, बिहार) में एक प्रमुख संरचना के अवशेष।

महत्वपूर्ण प्रश्न ?

1. *भारत में 'द्वितीय नगरीकरण' से क्या अभिप्राय है?*
2. *जनपदों और महाजनपदों का भारत के प्रारंभिक इतिहास में क्या महत्व है?*
3. *इन जनपदों और महाजनपदों ने किस प्रकार की शासन प्रणाली का विकास किया?*

0783CH04

याद करें कि द्वितीय सहस्राब्दी सामान्य संवत पूर्व (सा.सं.पू.) के आरंभिक काल में (अर्थात 2000 सा.सं.पू. के कुछ शताब्दियों पश्चात) भारत की प्रथम नगरीय सभ्यता कही जाने वाली सिंधु अथवा हड़प्पा या सिंधु-सरस्वती सभ्यता का विघटन हो गया था। उसके अनेक नगर परित्यक्त हो गए। कुछ स्थानों पर लोग जीवन-यापन करते रहे, परंतु उन्हें ग्राम्य जीवन-शैली की ओर लौटना पड़ा। ऐसा इस कारण हुआ क्योंकि हड़प्पाकालीन नगरों के समस्त घटक लुप्त हो गए थे, जैसे – भव्य निजी एवं सार्वजनिक भवन, भीड़-भाड़ वाले मार्ग एवं व्यस्त बाजार, विभिन्न शिल्पकारों के समूह (धातुकार, कुम्हार, स्थापत्यकार, बुनकर, हस्तशिल्पी इत्यादि), लेखन-प्रणाली, उन्नत स्वच्छता व्यवस्था, एक व्यवस्थित शासन तंत्र तथा इनके पीछे विद्यमान एक वृहत शासकीय संरचना जिसमें शासक वर्ग नेतृत्व करता था। इस प्रकार, प्रथम सहस्राब्दी सा.सं.पू. तक भारत से नगरीय जीवन लुप्तप्राय रहा। यद्यपि उत्तर भारत के कुछ भागों में कहीं-कहीं नगरीय सभ्यता के अवशेष विद्यमान रहे होंगे।

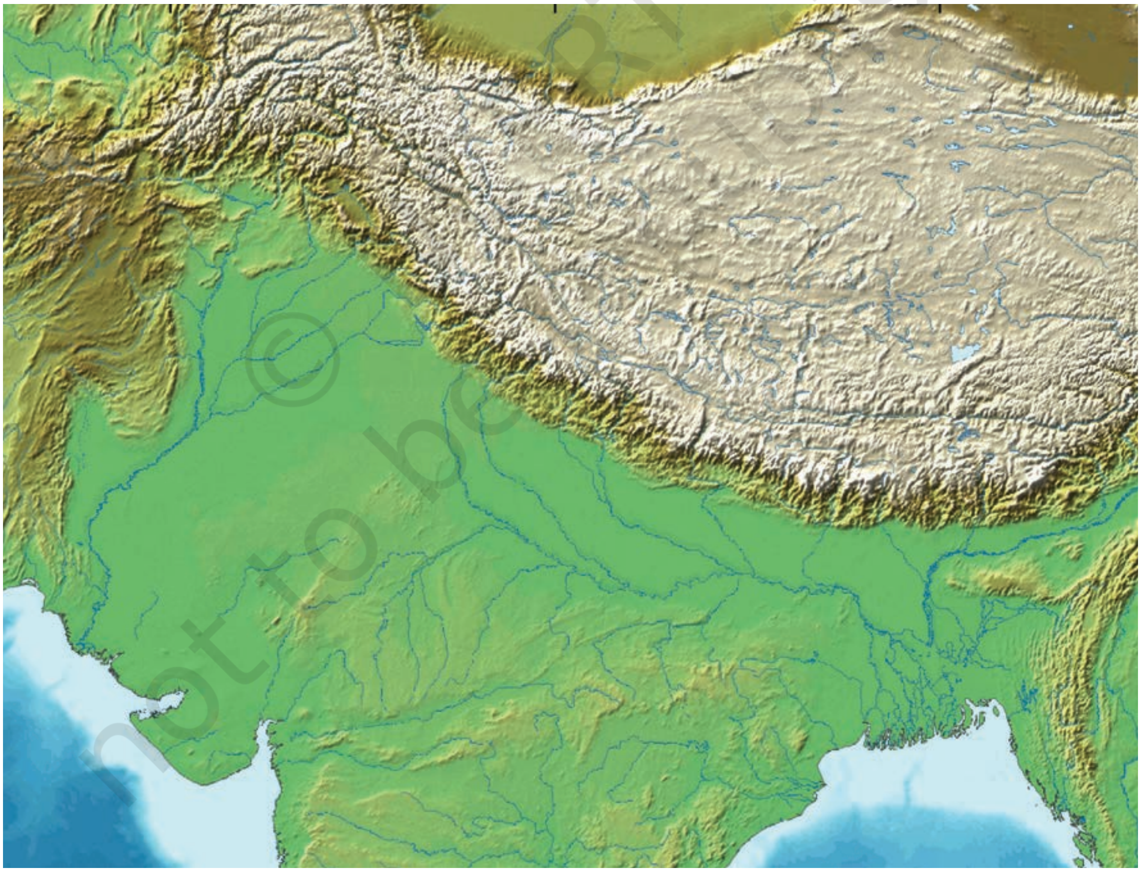

चित्र 4.2 — गंगा के उपजाऊ मैदानी भाग ने महाजनपदों के फलने-फूलने तथा समृद्ध होने में अहम भूमिका निभाई।

not to be republished © NCERT

Reprint 2026-27

निःसंदेह, भारत के प्राचीन इतिहास में कई महत्वपूर्ण क्षेत्रीय संस्कृतियाँ विद्यमान थीं, जिनका अध्ययन हम यहाँ नहीं कर रहे हैं।

इसके उपरांत, प्रथम सहस्राब्दी सा.सं.पू. में, विशेषत: गंगा के मैदानी भाग, सिंधु घाटी के कुछ क्षेत्रों तथा इसके निकटवर्ती क्षेत्रों में एक नवीन तथा जीवंत नगरीकरण का चरण प्रारंभ हुआ, जिसका क्रमशः संपूर्ण उपमहाद्वीप में विस्तार हुआ। इस नवीन नगरीकरण के साक्ष्य हमें दो प्रमुख स्रोतों से प्राप्त होते हैं—

(1) पुरातात्विक उत्खनन, जिनसे इन प्राचीन नगरों के अस्तित्व की पुष्टि होती है।

(2) प्राचीन साहित्य, जैसे – उत्तर वैदिक, बौद्ध तथा जैन साहित्य जिनमें इन नवीन नगरों का विशेष उल्लेख प्राप्त होता है।

नगरीकरण के इस नए चरण को प्राय: भारत का 'द्वितीय नगरीकरण' कहा जाता है, जो आश्चर्यजनक रूप से आज तक अनवरत चलता आ रहा है। आइए देखें, नगरीकरण का यह चरण कैसे विकसित हुआ?

जनपद एवं महाजनपद

द्वितीय सहस्राब्दी सा.सं.पू. के उत्तरार्ध में उत्तर भारत की विभिन्न क्षेत्रीय संस्कृतियाँ धीरे-धीरे स्वयं को पुनर्संगठित करने लगीं। लोग स्वयं को कुलों अथवा वंशों के रूप में संगठित करने लगे, जो संभवतः समान भाषा एवं सांस्कृतिक परंपराओं को साझा करते थे। प्रत्येक कुल या वंश एक नियत भूभाग से जुड़ गया, जिसे 'जनपद' कहा गया जो एक राजा या शासक द्वारा शासित होता था। संस्कृत में जनपद का अर्थ है— "जहाँ 'जन' ने अपने पद (पग या चरण) रखे हों", अर्थात जहाँ लोग निवास करने लगे।

जैसे-जैसे व्यापारिक मार्गों तथा वाणिज्यिक तंत्रों का विस्तार हुआ और वे विभिन्न जनपदों को आपस में जोड़ने लगे, वैसे-वैसे ये जनपद भी विकसित होने लगे। 8वीं या 7वीं शताब्दी सा.सं.पू. तक कुछ प्रारंभिक जनपद मिलकर विशाल राजकीय इकाइयों में परिवर्तित हो गए, जिन्हें 'महाजनपद' कहा गया। प्राचीन ग्रंथों में इन महाजनपदों की अलग-अलग सूचियाँ मिलती हैं परंतु एक प्रमुख प्रचलित सूची के अनुसार 16 महाजनपदों के नाम प्राप्त होते हैं। ये महाजनपद उत्तर-पश्चिम में गांधार से लेकर पूर्व में अंग तक तथा मध्य भारत में अश्मक (गोदावरी नदी के निकट) तक विस्तृत थे (मानचित्र देखें)। संभवतः इनके अतिरिक्त अन्य महाजनपद एवं छोटे-छोटे स्वतंत्र जनपद भी रहे होंगे।

© NCERT not to be republished

Reprint 2026-27

आइए विचार करें

ध्यान दीजिए कि अधिकांश महाजनपद गंगा के मैदानी भाग में केंद्रित थे। इसके अनेक कारण हो सकते हैं, जैसे – गंगा के उर्वर मैदान जिसके कारण कृषि कार्यों का विकास संभव हुआ, समीपवर्ती पहाड़ियों में लौह की उपलब्धता (जिसका आगे 'लौह' शीर्षक में वर्णन है) और नवीन वाणिज्यिक पथों का विकास एवं विस्तार।

आइए पता लगाएँ

- → इन नवीन राजकीय इकाइयों में सर्वाधिक शक्तिशाली महाजनपद थे— मगध, कोसल, वत्स तथा अवंति। मानचित्र को देखकर क्या आप इनकी राजधानियों की पहचान कर सकते हैं? साथ ही, इनमें से कितने नगरों की पहचान वर्तमान भारतीय नगरों से की जा सकती है?
- → इस मानचित्र की तुलना कक्षा 6 के अध्याय 'भारत अर्थात इंडिया' में महाभारत में उल्लिखित प्रदेशों के मानचित्र (चित्र 5.4) से कीजिए और उन नामों को सूचीबद्ध कीजिए जो दोनों में समान हैं। आपके अनुसार यह समानता क्या संकेत करती है?

परिखा (खाई) किले या किलेबंद शहर के चारों ओर एक गहरा तथा चौड़ा गड्ढा जिसमें पानी भरा होता था।

मानचित्र (चित्र 4.3) में महाजनपदों की राजधानियों को दर्शाया गया है। इनमें से अधिकांश नगर विशाल तथा सुदृढ़ प्राचीरों (किलों) से युक्त थे, जिनके बाहर सुरक्षा हेतु एक गहरी **परिखा (खाई)** बनाई जाती थी। प्रायः दुर्ग की प्राचीरों के प्रवेश द्वार जान-बूझकर सँकरे बनाए जाते थे जिससे नगर में प्रवेश और निकास करने वाले जनों एवं वस्तुओं का प्रहरियों द्वारा नियंत्रण किया जा सके। विचारणीय तथ्य यह है कि प्राचीन राजधानियाँ आज भी नगरों के रूप में विद्यमान हैं। ये 'आधुनिक' नगर वस्तुतः 2500 वर्ष प्राचीन हैं!

प्रारंभिक लोकतांत्रिक परंपराएँ

प्रत्येक जनपद में एक सभा या परिषद होती थी जिसे 'सभा' या 'समिति' कहा जाता था। इस परिषद में कुल से संबंधित विषयों पर विचार-विमर्श होता था। (स्मरण कीजिए, 'भारत की सांस्कृतिक जड़ें' नामक अध्याय में बताया गया है कि ये शब्द 'सभा' एवं 'समिति' सर्वप्रथम वेदों में मिलते हैं, जो भारत के प्राचीनतम ग्रंथ हैं।) संभावना है कि इन सभाओं के अधिकांश सदस्य कुल के वरिष्ठजन होते थे। राजा से यह अपेक्षा नहीं की जाती थी कि वह स्वेच्छाचारी शासन करे। एक सदाचारी राजा वह माना जाता था जो मंत्रियों, प्रशासकों तथा सभा-समिति से परामर्श लेकर निर्णय ले। कुछ ग्रंथों के अनुसार

© NCERT not to be republished

Reprint 2026-27

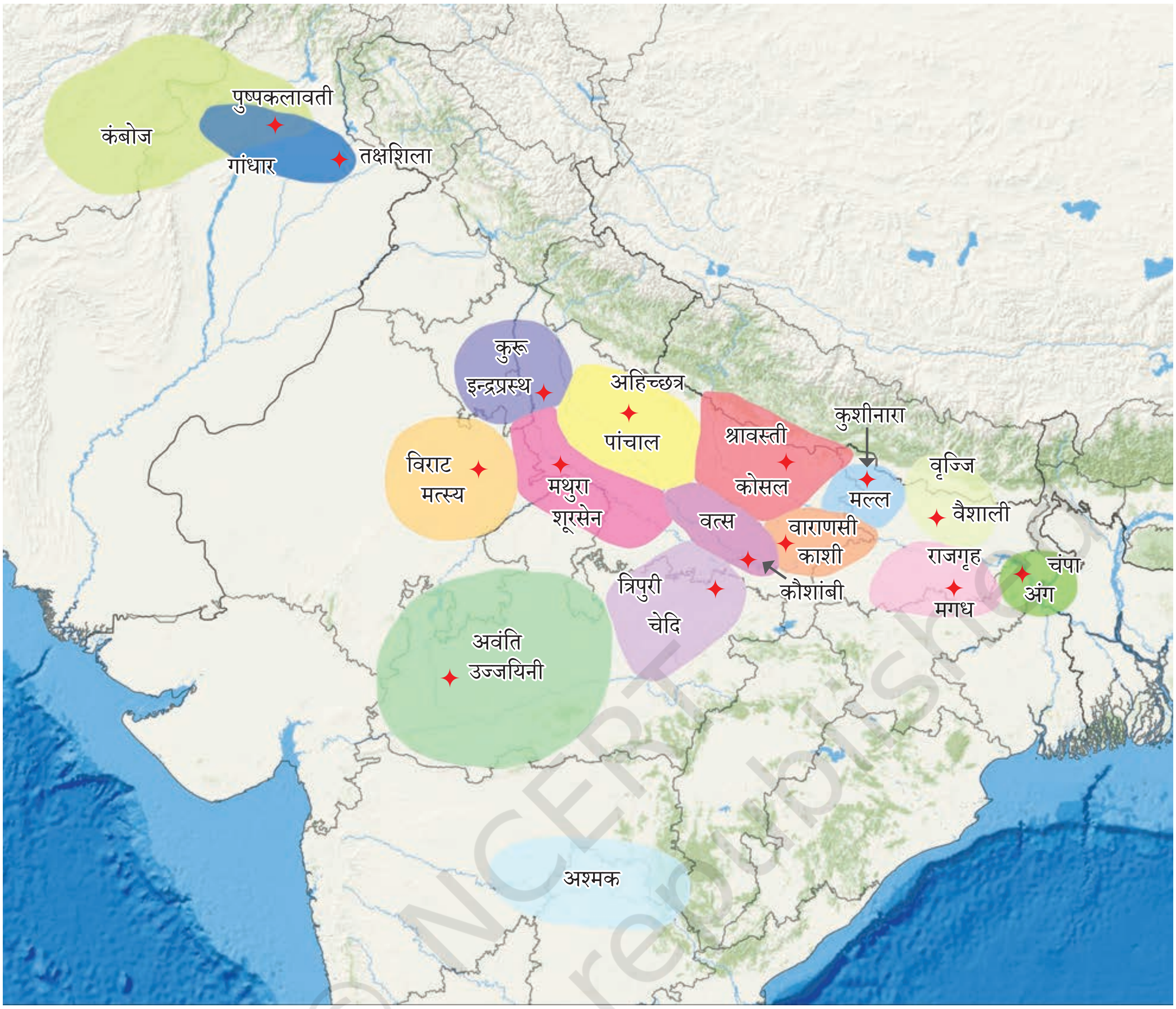

चित्र 4.3 — 16 महाजनपदों का मानचित्र। ध्यान रखें कि इनकी सीमाएँ अनुमानित हैं।

© NCERT not to be republished

यदि कोई राजा अयोग्य होता है, तो सभा द्वारा उसे पदच्युत भी किया जा सकता था। यद्यपि ऐसे उल्लेख महत्वपूर्ण हैं, परंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि यह कोई विधिसम्मत परंपरा थी, क्योंकि हमारे पास उस कालखंड के पूर्ण साक्ष्य उपलब्ध नहीं हैं।

अपनी राजनीतिक प्रणाली के अंतर्गत महाजनपदों ने जनपदों के मूल सिद्धांतों का विस्तार एवं परिष्कार किया। कुछ महाजनपदों में राजतंत्रात्मक शासन प्रणाली थी अर्थात राजा सर्वोच्च अधिकारयुक्त होता था जिसे मंत्रियों तथा वरिष्ठजनों की सभा या समिति का समर्थन प्राप्त होता था। राजा का पद सामान्यतः वंशानुगत होता था, अर्थात वर्तमान राजा साधारणतः पूर्ववर्ती राजा का पुत्र होता था। राजा के प्रमुख उत्तरदायित्व होते थे— कर (राजस्व) संग्रह करना, शासन व विधि व्यवस्था बनाए रखना, राजधानी में सुदृढ़ प्राचीरें (दुर्ग) और परिखाएँ बनवाना तथा अपने राज्य की रक्षा हेतु सैन्य-बल का संचालन

Reprint 2026-27

करना या परिस्थिति अनुसार समीपवर्ती राज्यों से युद्ध करना। मगध (जो वर्तमान बिहार में स्थित था), कोसल (वर्तमान उत्तर प्रदेश का भाग) तथा अवंति (वर्तमान मध्य प्रदेश का भाग), ये सब उस काल के शक्तिशाली महाजनपद थे।

हालाँकि, दो महाजनपदों, वज्जि (वृज्जि) एवं उसके समीपवर्ती राज्य मल्ल की शासन पद्धति भिन्न थी। इन महाजनपदों में *सभा* अथवा समिति को अधिक शक्तियाँ प्राप्त थीं तथा यहाँ सभी महत्वपूर्ण विषयों पर विचार-विमर्श एवं आवश्यकतानुसार मतदान द्वारा निर्णय लिए जाते थे। आश्चर्य की बात यह थी कि इन महाजनपदों में राजा का चयन भी सभा अथवा समिति द्वारा किया जाता था। इसका तात्पर्य यह है कि ये महाजनपद राजतंत्र नहीं, बल्कि गण अथवा संघ के रूप में कार्य करते थे। इनकी शासन-प्रणाली को गणतांत्रिक प्रणाली कहा जा सकता है, क्योंकि इनमें सभा के सदस्य ही राजा का चयन करते थे तथा प्रमुख निर्णयों का निर्धारण करते थे। वास्तव में विद्वानों ने इन महाजनपदों (वज्जि और मल्ल) को प्राय: 'प्रारंभिक गणराज्य' कहा है, क्योंकि ये विश्व की सर्वप्रथम गणतांत्रिक प्रणालियों में से एक थे।

चित्र 4.4 — वत्स महाजनपद की राजधानी कौशांबी में एक भवन समूह के अवशेष

Reprint 2026-27

कुछ अन्य नवीन प्रयोग

जनपदों तथा महाजनपदों का यह युग गंभीर परिवर्तनों का काल था, जो वर्तमान समय तक भारतीय सभ्यता को प्रभावित करता रहा है। कक्षा 6 के 'भारत की सांस्कृतिक जड़ें' नामक अध्याय में हमने देखा कि इस काल में उत्तर वैदिक, बौद्ध, जैन इत्यादि अनेक नवीन विचारधाराओं का उदय हुआ तथा उनसे संबंधित अनेक ग्रंथों की रचना भी हुई। इन विचारों को विद्वानों, भिक्षुओं और भिक्षुणियों के द्वारा संपूर्ण भारतवर्ष में यात्रा करते हुए अथवा तीर्थ यात्राओं के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया गया। इस समय भारतीय कला का भी नवीनीकरण हुआ, जो आगे चल कर साम्राज्य काल में पुष्पित-पल्लवित हुआ।

नगरीकरण तकनीकी के बिना संभव नहीं है। हमने पूर्व में देखा कि हड़प्पा सभ्यता के लोग ताम्र और कांस्य की धातु कला में दक्ष थे। अब इस द्वितीय नगरीकरण की प्रक्रिया में लौह धातुकर्म की तकनीक का प्रयोग एक महत्वपूर्ण परिवर्तन था। भारत के अनेक क्षेत्रों में द्वितीय सहस्राब्दी सा.सं.पू. के प्रारंभ में ही लौह निष्कर्षण एवं उसे आकार देने की विधियाँ विकसित हो चुकी थीं, परंतु दैनिक-जीवन में लोहे का उपयोग कुछ शताब्दियों बाद व्यापक हुआ। द्वितीय सहस्राब्दी सा.सं.पू. के अंत तक लोहे के उपकरण कृषि में प्रयुक्त होने लगे, जिससे कृषि का विस्तार हुआ। साथ ही, लोहे के बने हथियार, जैसे – तलवार, भाले, तीर, ढाल इत्यादि कांस्य की तुलना में अधिक हल्के, तीव्र और प्रभावशाली सिद्ध हुए। इस काल में युद्धों के भी कुछ प्रमाण मिलते हैं, जो संभवत: विभिन्न महाजनपदों के मध्य हुए होंगे, यद्यपि उनकी बारंबारता या भीषणता स्पष्ट नहीं है। इन युद्धों और कभी-कभी होने वाले गठबंधनों के कारण नए राज्य और साम्राज्य अस्तित्व में आए, जिनकी चर्चा हम आगे करेंगे।

भारत में प्रथम बार सिक्कों का प्रयोग एक अन्य नवाचार था। व्यापार के विस्तार ने मुद्रा (सिक्का) की आवश्यकता को जन्म दिया। शीघ्र ही ये सिक्के भारत के विभिन्न भागों, यहाँ तक कि विदेशों में भी विनिमय हेतु प्रयुक्त होने लगे। भारत के प्रारंभिक सिक्के चाँदी के बने होते थे, जो एक नरम धातु है। इसमें प्रतीकों या चिह्नों को 'आहत' कर अंकित किया जाता था, अतः इन्हें 'आहत सिक्के' भी कहा जाता है। कालांतर में तांबा, सोना तथा अन्य धातुओं के भी सिक्के बनने लगे। सामान्यतः प्रत्येक महाजनपद अपनी स्वतंत्र मुद्रा जारी करता था, परंतु व्यापार में समीपवर्ती राज्यों की मुद्राएँ भी प्रचलित थीं तथा परस्पर विनिमय में प्रयुक्त होती थीं।

© NCERT not to be republished

आइए पता लगाएँ

निम्नलिखित तालिका में प्रत्येक वर्ग में 'हाँ' (सही का चिह्न) या 'नहीं' (काटने का चिह्न) भरें, जो भारतीय सभ्यता के दोनों चरणों की एक रोचक तुलना करती है।

	प्रथम नगरीकरण	द्वितीय नगरीकरण
गंगा का मैदान		
बौद्ध मठ		
साहित्य		
व्यापार		
युद्धकला		
ताम्र/कांस्य		
लोहा		

© NCERT not to be republished

वर्ण-जाति व्यवस्था

हमने पहले देखा कि कैसे सभ्यता के उदय के साथ-साथ मानव समाज और अधिक जटिल होता गया। जब कभी भी ऐसा होता है, समाज स्वयं को विभिन्न समूहों में संगठित कर लेता है, जैसे – वर्ग, व्यवसाय या अन्य किसी आधार पर। उदाहरण के लिए शासन, प्रशासन, धर्म, शिक्षा, व्यापार, नगर-नियोजन, कृषि, शिल्प, कला इत्यादि से संबंधित अनेक प्रकार के कार्य के लिए अलग-अलग समूह हो सकते थे।

Reprint 2026-27

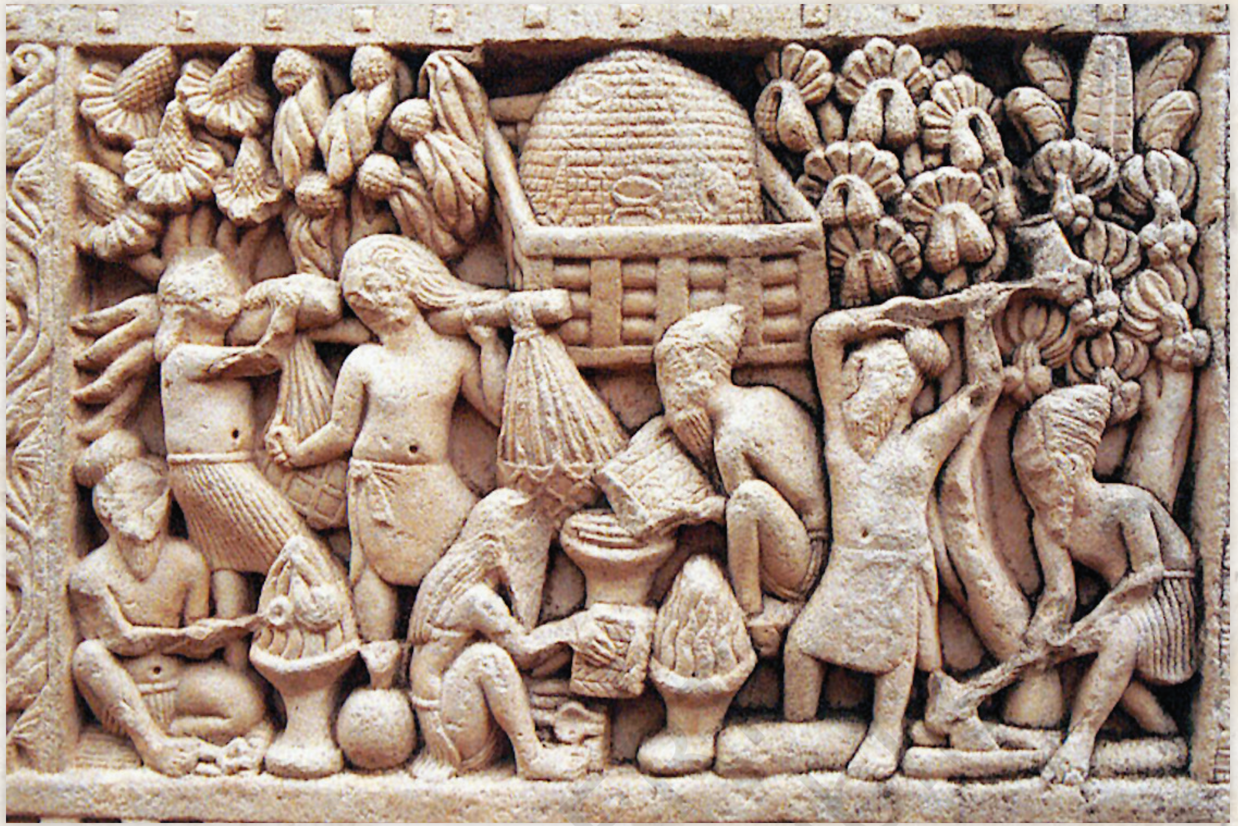

चित्र 4.5 — साँची स्तूप का एक पैनल जिसमें लौह धातु कार्यशाला दर्शाई गई है। इसमें श्रमिकों को जलावन की लकड़ी एवं जल लेकर आते, आग जलाते और लोहा पीटते हुए दिखाया गया है।

चित्र 4.6 — उत्तर भारत के विभिन्न प्राचीन नगरों से प्राप्त कुछ आहत सिक्के

Reprint 2026-27

आइए पता लगाएँ

- → एक विकसित समाज अपने आप को विभिन्न समूहों में क्यों विभाजित करता है? ऐसा क्यों होता हैं, इसके संभावित कारणों पर विचार करें।
- → आप प्रथम सहस्राब्दी सा.सं.पू. के एक विकसित समाज में ऐसे और कौन-कौन से व्यवसायों की कल्पना कर सकते हैं?

एक आदर्श समाज में ये सभी समूह एक-दूसरे के पूरक होते हैं तथा समरसता से कार्य करते हैं। परंतु अधिकांशतः ये विभाजन असमानताओं को भी जन्म देते हैं, जैसे– कुछ समूह दूसरों की तुलना में अधिक संपत्ति, शक्ति या प्रभाव प्राप्त कर लेते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो, 'समानता' एक ऐसा आदर्श है जिसकी प्रायः मानव ने कल्पना की है, परंतु शायद ही कोई समाज इसे पूरी तरह प्राप्त कर सका हो।

भारतीय समाज दो प्रकार की व्यवस्थाओं में संगठित था। पहला वर्ग था 'जाति'। जाति एक ऐसा समुदाय या समूह था जिसके सदस्य किसी विशेष पेशे या जीविका से जुड़े होते थे, जैसे– कृषि, धातुकर्म, वाणिज्य या किसी हस्तकला में दक्षता। यह कौशल पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होता था। प्राय: एक जाति के भीतर और भी उप-जातियाँ होती थीं जिनके अपने रीति-रिवाज, जैसे– विवाह के नियम, धार्मिक अनुष्ठान या भोजन की परंपराएँ अलग-अलग होती थीं।

दूसरी श्रेणी थी 'वर्ण' जो वैदिक ग्रंथों से उद्भूत एक अवधारणा थी। वर्ण चार प्रकार के माने गए— ब्राह्मण, जो ज्ञान को सुरक्षित रखने, उसका प्रचार-प्रसार करने और यज्ञ आदि धार्मिक कृत्य करने में लगे रहते थे; क्षत्रिय, जिनका कार्य समाज और देश की रक्षा करना और आवश्यकता पड़ने पर युद्ध करना था; वैश्य, जिनका कार्य समाज की समृद्धि बढ़ाना था, जैसे– व्यापार, व्यवसाय या कृषि; और शूद्र, जो शिल्पकला, निर्माण, सेवा या अन्य कार्यों में संलग्न रहते थे।

इसे अनदेखा न करें

आपने अंग्रेजी शब्द 'कास्ट' सुना होगा। यह शब्द पुर्तगाली भाषा के शब्द 'कास्टा' से आया है। 16वीं शताब्दी में जब पुर्तगाली यात्री भारत आए तो उन्होंने भारत की सामाजिक संरचना को समझने के लिए इस शब्द का प्रयोग किया। कुछ विद्वान 'कास्ट' का प्रयोग वर्ण के संदर्भ में करते हैं। जबकि अधिकांश इसे जातियों के लिए उपयुक्त मानते हैं। कुछ दूसरे विद्वान 'कास्ट' शब्द का प्रयोग संपूर्ण वर्ण-जाति व्यवस्था को इंगित करने के लिए करते हैं।

not to be republished © NCERT

Reprint 2026-27

ग्रंथों और अभिलेखों से मिले ऐतिहासिक प्रमाणों से यह ज्ञात होता है कि प्रारंभिक काल में व्यक्ति और समुदाय अपनी परिस्थितियों के अनुसार अपने व्यवसाय को बदल लेते थे। उदाहरण के लिए, लंबे समय तक पड़े अकाल या प्राकृतिक आपदा के कारण किसी कृषक समुदाय को अपने क्षेत्र से नगर की ओर पलायन करना पड़ता था और उन्हें अन्य व्यवसाय अपनाने पड़ते थे। कुछ ब्राह्मण व्यापार या यहाँ तक कि सैनिक कार्यों में भी प्रवृत्त हो जाते थे। यह जटिल प्रणाली भारतीय समाज की रचना में सहायक रही, जो समाज की गतिविधियों विशेषतः आर्थिक गतिविधियों को संगठित करने में उपयोगी रही और इसने समाज को कुछ हद तक स्थिरता प्रदान की। किंतु समय के साथ यह प्रणाली कठोर होती चली गई, जिससे निम्न जातियों या उन समुदायों के प्रति असमानता और भेदभाव बढ़ा, जो वर्ण-जाति व्यवस्था से बाहर माने गए। इस प्रक्रिया का अध्ययन आगे की कक्षा में किया जाएगा।

वर्ण-जाति व्यवस्था ने भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव डाला है। पीढ़ियों से अनेक विद्वानों ने इसके असंख्य पहलुओं का अध्ययन किया है। यह आम सहमति है कि प्राचीन काल में यह व्यवस्था अपेक्षाकृत भिन्न थी (विशेष रूप से अधिक लचीली थी) लेकिन समय के साथ विशेषत: ब्रिटिश शासनकाल में यह अत्यधिक कठोर हो गई। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि वर्ण-जाति व्यवस्था भारतीय समाज में कार्यरत एक प्रमुख व्यवस्था रही है, परंतु यह एकमात्र सामाजिक व्यवस्था नहीं रही है। अन्य अनेक व्यवस्थाएँ भी अस्तित्व में थीं, जिनका अध्ययन हम आगे के अध्यायों में विशेषकर 'हमारी सांस्कृतिक धरोहर और ज्ञान परंपराएँ' में करेंगे।

आइए विचार करें

समाज में असमानताएँ अनेक रूपों में पाई जाती हैं। क्या आपने कभी ऐसी कोई घटना देखी या अनुभव की है जब आपको या आपके किसी परिचित को दूसरों से भिन्न समझा गया हो? क्या आप मानते हैं कि समाज में समानता आवश्यक है? यदि हाँ, तो क्यों? क्या आपने किसी ऐसे व्यक्ति या किसी ऐसी पहल को देखा है, जिनके द्वारा समाज में असमानता को कम करने का प्रयास किया गया हो?

भारत के अन्य भागों में विकास

प्रथम सहस्राब्दी सा.सं.पू. में व्यापार, तीर्थयात्रा तथा सैन्य अभियान आदि के उद्देश्य से महत्वपूर्ण संचार मार्ग विकसित हुए। इनमें दो मार्ग उत्तरापथ तथा दक्षिणापथ विशेष रूप से प्रसिद्ध रहे, जिनका उल्लेख साहित्य में भी मिलता है। प्रथम मार्ग उत्तर-पश्चिम

© NCERT not to be republished

Reprint 2026-27

क्षेत्रों से गंगा के मैदानों और वहाँ से पूर्वोत्तर भारत को जोड़ता था। दूसरा मार्ग, कौशांबी (प्रयागराज के समीप), जो उस समय महाजनपदों में से एक की राजधानी थी, वहाँ से प्रारंभ होकर विंध्य पर्वत शृंखला को पार करते हुए दक्षिण भारत की ओर जाता था। जब हम भारत में साम्राज्य-निर्माण की प्रक्रिया का अध्ययन करेंगे, तब इन मार्गों पर और विस्तार से चर्चा करेंगे।

इसके अतिरिक्त अनेक समानांतर मार्ग भी भारत के अन्य भागों को जोड़ते थे, विशेषकर पश्चिमी और पूर्वी समुद्री तटों के महत्वपूर्ण बंदरगाहों को, जो व्यापार के सक्रिय केंद्र थे। पूर्वी क्षेत्र में कई प्रमुख नगर उभरे, जैसे – शिशुपालगढ़ (वर्तमान भुवनेश्वर, ओडिशा), जो कलिंग क्षेत्र की राजधानी थी। यह नगर एक सुनियोजित वर्गाकार आधार-रचना पर बना था, जिसमें सुदृढ़ दुर्ग और चौड़ी सड़कें थीं।

भारतीय उपमहाद्वीप के दक्षिणी क्षेत्रों में नगर-निर्माण की प्रक्रिया 400 सा.सं.पू. के आस-पास हुई। यद्यपि नवीनतम पुरातात्विक उत्खननों में यह संकेत मिलते हैं कि

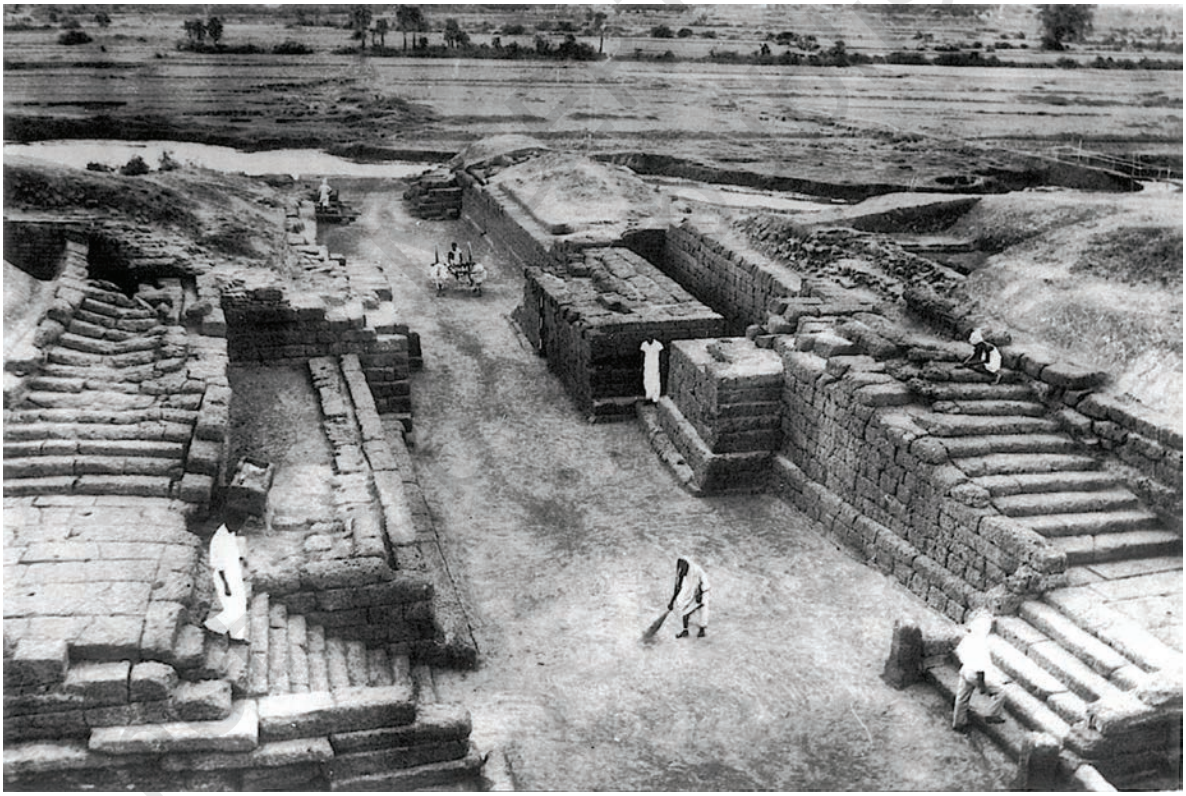

चित्र 4.7 — शिशुपालगढ़ (आधुनिक भुवनेश्वर, ओडिशा का एक उपनगर, 1948 में प्रथम बार उत्खनित) नगर में प्रवेश करने वाले द्वारों में से एक, जो दुर्ग की प्राचीरों के मध्य स्थित है। द्वार के बाहर जल से भरी हुई परिखा (खाई) देखी जा सकती है। ध्यान दें कि द्वार सोच-समझकर संकरा बनाया गया था, जिससे लोगों और सामान की आवाजाही पर नियंत्रण रखा जा सके।

Reprint 2026-27

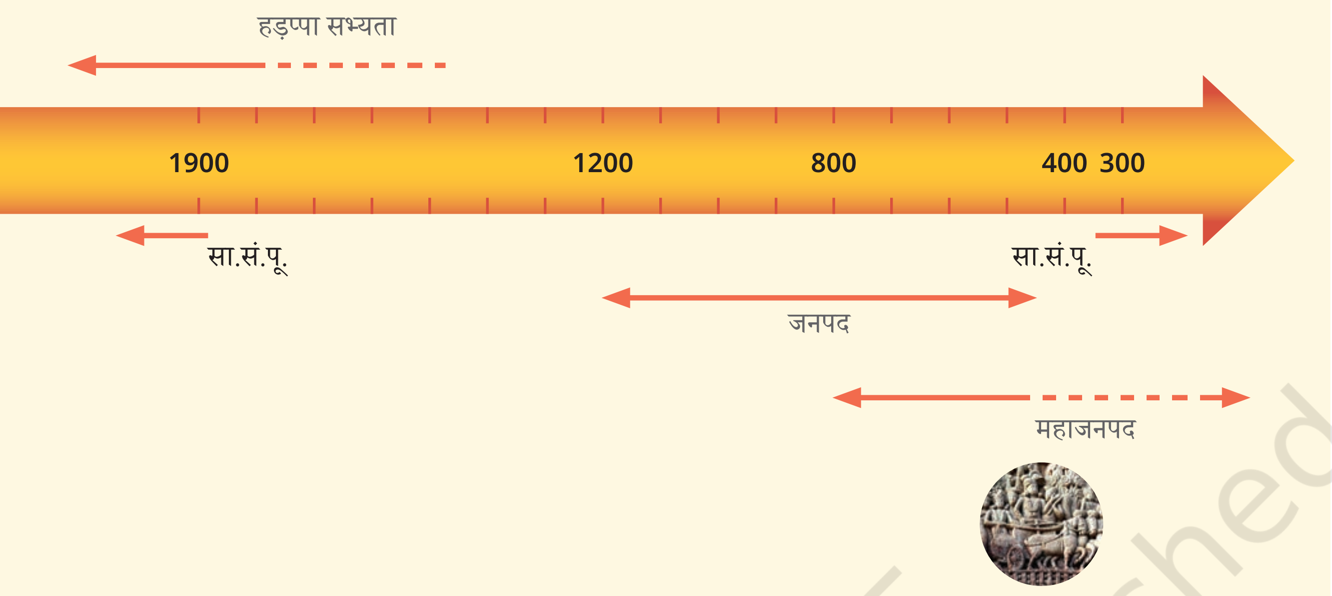

चित्र 4.8 — 1900 से 300 सा.सं.पू. तक की समय-रेखा

चित्र 4.9 — इरोड के निकट कोडुमनाल, तमिलनाडु में शंख तथा रत्न उद्योग

Reprint 2026-27

व्यापारिक गतिविधियाँ इस काल से पूर्व भी विद्यमान थीं। इसी कालखंड में दक्षिण भारत में तीन प्रमुख राज्यों— चोल, चेर और पांड्य का उदय हुआ।

पुरातात्विक साक्ष्यों के अतिरिक्त प्राचीनतम तमिल साहित्य में इन राज्यों तथा उनके राजाओं का उल्लेख मिलता है।

दक्षिणी क्षेत्र बहुमूल्य तथा अर्ध-बहुमूल्य रत्नों, स्वर्ण तथा सुगंधित मसालों जैसे संसाधनों से समृद्ध थे। अतः उन्होंने न केवल संपूर्ण भारत बल्कि विदेशी राज्यों व साम्राज्यों के साथ भी लाभप्रद व्यापार किया।

300 या 200 सा.सं.पू. के लगभग उत्तर-पूर्वी प्रदेश समेत संपूर्ण उपमहाद्वीप एक परस्पर जुड़ा हुआ जीवंत भूभाग बन चुका था। वस्तुएँ और संस्कृति एक से दूसरे क्षेत्र में तथा कई बार भारत से बाहर मध्य एशिया एवं दक्षिण-पूर्व एशिया तक भी पहुँचीं।

इसी समय महाजनपदों का अस्तित्व समाप्त हो गया और उनके स्थान पर ऐसे नवीन परिवर्तन आए, जिन्होंने भारत को पुनः आकार देना प्रारंभ किया।

आगे बढ़ने से पहले...

- दूसरी सहस्राब्दी सा.सं.पू. के अंत से उत्तर और मध्य भारत के कुछ भागों में जनपदों का उदय हुआ। ये छोटे राज्य थे जिनका शासक एक राजा होता था, जो वरिष्ठजनों की परिषद से परामर्श लेकर निर्णय करता था।
- प्रथम सहस्राब्दी सा.सं.पू. में 16 महाजनपद प्रथम संगठित राज्य के रूप में स्थापित हुए। इसी कालखंड में भारत में द्वितीय नगरीकरण प्रारंभ हुआ, जो गंगा क्षेत्र से दक्षिण भारत तक सभी दिशाओं में विस्तृत हो गया। लगभग 300 सा.सं.पू. तक महाजनपदों का अस्तित्व समाप्त हो गया।
- इसी अवधि में उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम तथा संपूर्ण उपमहाद्वीप को जोड़ने वाला एक विशाल सड़क मार्ग बना। इन मार्गों के माध्यम से लोगों, वस्तुओं, विचारों एवं शिक्षाओं का आदान-प्रदान हुआ।

© NCERT not to be republished

Reprint 2026-27

प्रश्न और क्रियाकलाप

1. अध्याय के आरंभ में दिए गए उद्धरण पर विचार करें और समूह में चर्चा करें। अपने निरीक्षणों तथा निष्कर्षों की तुलना करें कि कौटिल्य ने एक राज्य के लिए क्या अनुशंसा की थी? क्या यह आज की परिस्थिति से भिन्न है?
2. पाठ के अनुसार प्रारंभिक वैदिक समाज में शासकों का चयन कैसे किया जाता था?
3. कल्पना कीजिए कि आप प्राचीन भारत के इतिहास का अध्ययन करने वाले एक इतिहासकार हैं। महाजनपदों के विषय में अधिक जानकारी हेतु आप कौन-कौन से स्रोतों (पुरातात्विक, साहित्यिक इत्यादि) का उपयोग करेंगे? प्रत्येक स्रोत से आपको क्या जानकारी प्राप्त हो सकती है, वर्णन करें।
4. प्रथम सहस्राब्दी सा.सं.पू. में नगरीकरण हेतु लौह धातु-विज्ञान का विकास इतना महत्वपूर्ण क्यों था? उत्तर देने हेतु आप पाठ में दिए गए तथ्यों के साथ-साथ अपनी जानकारी या कल्पना का भी उपयोग कर सकते हैं।

© NCERT not to be republished

Reprint 2026-27

मेरी अभिव्यक्ति

© NCERT not to be republished

इस स्थान का उपयोग टिप्पणी और चित्रांकन हेतु कीजिए।

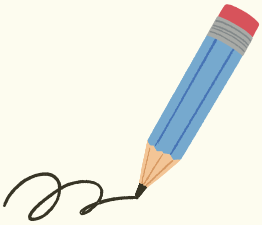

Reprint 2026-27